Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. 16, Issue No. 3, (Special Issue) March-2019, ISSN 2230-7540

अस्तित्व से जूझती राजस्थान की लोकसंगीत ख्याल विद्या ख्यालो का दांगलिक रूप "कन्हैया"

Dr. Sunita Shrimali*

Assistant Professor, Rajasthan Music Institute, Jaipur

सार – ***राजस्थान की संस्कृति की विविंद्यता का अपना अलग ही महत्व है। जहाँ एक ओर सम्पूर्ण भारतीय संस्कृति में एकता दिखाई देती है वहां विभिन्न प्रदेश अपनी-अपनी संस्कृति व परम्पराओं में अपनी अलग-अलग पहचान रखते हैं।राजस्थान के पश्चिमांचल प्रदेश के लोक संगीत में गोरबंद, पिणिहारी मूमल मांड, कूरंजा, निम्बुड़ा आदि प्रसिद्ध है। उसी प्रकार राजस्थान के पूर्वांचल प्रदेश में तथा अन्य भागों में लोकसंगीत की कई विधाएं प्रचार में हैं इनमें तुर्रा कलंगी बैठक के ख्याल, संगीत दंगल, कन्हैया, चारबैत, नौटंकी आदि लोकसंगीत विद्या प्रचार में हैं। बदलते परिवेश में कन्हैया, लोककला का अस्तित्व खतरे में है। अपनी कला से कला प्रेमियों को अभिभूत कर देने वाले लोक कलाकार आजकल विपन्नावस्था से गुजर रहे है। ग्राम्यांचलों में निवास करने वाले ये लोक कलाकार अपनी अमूल्य कला धरोहरों को भूलकर दो वक्त की रोटी के लिये अन्य कार्यों में अपना परिश्रम करके गुजर बसर कर रहे है***

पुनराव्रती शब्द: कन्हैया लोकशैली, राजस्थान, लोक कलाकार

----------X----------

कन्हैया गायकी का प्रादूर्भावः

ख्यालों के जो दांगलिक रूप आज भी प्रचार में है उनमें "कन्हैया" गीत रूप भी प्रमुख है। यह प्रकार भी अपनी विशिष्टताओं के कारण अत्यन्त लोकप्रिय है।"कन्हैया" मीणा जाति का सदियों पुराना एक गीत रूप है, जो समूह में गाया जाता है कभी-कभी तो ऐसे दल समूल या दल में सौ से भी अधिक गायक भाग लेते हैं। इतनी बडी संख्या में गायक दल द्वारा प्रस्तुत स्वर व ताल में निबद्ध रचना सुनना एक अदभुत आनन्द है साथ ही ऐसी अनोखी सांगीतिक विद्या शायद ही अन्यत्र देखने-सुनने को मिले। "कन्हैया" लोक गीत भरतपुर, धौलपुर, दौसा व सवाई माधोपुर जिलों के अनके क्षेत्रों में प्रचार में है। किन्तु धीरे-धीरे यह प्रथा लुप्त होती जा रही है।मीणा जाति का एक अन्य गीत "रसिया" भी माना जाता है। अतः कृष्ण के रास से सम्बन्धित इस विधा का नाम "कन्हैया" पड़ा। यह एक मत है किन्तु कुछ लोगों का यह मानना है कि इसे "कन्हैया" नामक व्यक्ति ने आरम्भ किया था। अधिक मान्यता यह है कि इस गीत के बीच में "कहन" का बडा महत्व है जो गाकर या दोहा-रूप में कही जाती है, इसी "कहन" से "कन्हैया" बना।

गायकी का विशिष्ठ अन्दाज "कन्हैया" को प्रस्तुत करने से पूर्व इसका अभ्यास करना आवश्यक होता है। अभ्यास कराने वाले को मेडिया कहा जाता है, जो मुख्य गायक, निर्देशक होता है। बडे दल को एक साथ स्वय-ताल क्रियाओं से समन्वित कराने में महीनों लग जाते है। एक सहायक मेडिया भी होता है जो मुख्य मेडिया को हर प्रकार का सहयोग देता है। दल दो भागों मे बट जाता है व अई चंद्राकार शकल में आमने-सामने खडा हो जाता है। मेडिया प्रथम दल के गायन के पहले भाग की समाप्ति पर रूमाल उठाए दूसरे दल की तरफ भाग कर जाता है। और गीत की अगली पंक्ति बोलते हुये अपना रूमाल या अंगोछी झटके से नीचे गिरा देता है। इस इशारे से दूसरे दल आगे से पीछे झुमते हुये गाने लगता है।

"कन्हैया" के साथ जो वाद्य संगत में काम आते हैं। उनमें प्रमुख "नौबत" का स्थान है। यह लोहे का बडे कडाह के आकार का वाद्य होता है। जिसके ऊपर भैंस का चमडा मढा रहता है। यह भीतर से पोला होता है। तथा ऊपर का चमडा इसके चारों ओर ताँत से कसा जाता है। इसे लकडी के डंको से बजाया जाता है। घेरा व मंजीरा वाद्य भी काम में आते हैं।

www.ignited.in

साधारणतया "कन्हैया" के प्रस्तुतिकरण में पौराणिक कथाओं के गीत होते है जैसे सुदामा चरित्र, राम बनवास, विश विवाह, समुद मंथन व कृष्णलीला से संबंधित विषय। इनके अतिरिक्त वीर रस की रचनाएं गाई जाती है व गुड्डू बनाए व गाए जाते है। आजकल परम्परागत धुनों के अतिरिक्त फिल्मी तर्जो पर भी मत धड लिये जाते है।"कन्हैया" के दंगल में दो या तीन पार्टियों से अधिक नही बुलाई जाती है। ये दंगल दिन के समय आयोजित होते है। "कन्हैया" के कुछ प्रसिद्ध दलों के स्थान इस प्रकार हैः- सवाई माधोपुर जिला बामनवास, मण्डाल, सोप, खेडला, कैमा, पीलोदा, कूंजेजा, शेखुपर, राणोली व बई उदई आदि। व भतरपुर जिलाः- पौउण्डा, मिलकपुर, लालरामपुराव, मंगवाना आदि है।

"कन्हैया" के अनेक पारम्परिक गीतों में से बानगी के तौर पर केमा पार्टी का यह गीत प्रस्तुत हैः-

राजामोर ध्वज,

हे रे राजा चल दियो

रे साधुन के हिण आयो

और हाथ जोड के करू

विनती वचन देन कू आयो

कहन-दो साधु ठाडे दार पे वचन हमसे मांगते आरे जांऊ पाऊ आपकी अज्ञा अपने मुख्य से दीजिए।

लोक शैलियों का तुलनात्मक विवेचनः

राजस्थान के ख्याल साहित्य पर यदि दृष्टि डालें तो हम पाते हैं कि राजस्थान के सुदूर पूर्व में दंगल सहित अन्य कई सांगीतिक विधाएं प्रचार में है उदाहरणार्थः- तुर्राकलंगी, हेला ख्याल, दांगलिक ख्यालों में कन्हैया, ढप्पाली, बैठक के ख्याल आदि। इस संागीतिक विधाओं पर ब्रज क्षेत्र का स्पष्ट एवं जबरदस्त प्रभाव है अतः कई बार तो ऐसा लगता है कि अलवर, भरतपुर, धौलपुर, सवाई माधोपुर, डीग व करौली के संगीत व नृत्य कला रूप राजस्थान के शेष क्षेत्रों के रंग से सर्वथा भिन्न है। उनकी ब्रज मिश्रित बोलियां भी अलग लगती है फिर भी वे एक दूसरे से कुछ समानता रखते हैं।

ख्यालों के जो दांगलिक रूप आज भी प्रचलित है उनमें हेला ख्याल, ढप्पाली- राग (तालबंदी गायकी) तथा कन्हैया लोक शैली का नाम प्रमुख रूप से लिया जा सकता है। धौलपुर का मेट दंगल भी प्रसिद्ध रहा। इन दंगलों में काफी समानताएँ हैं, फिर भी ये अपनी कुछ विशिष्टताओं के कारण अलग पहचाने जाते हैं। प्रस्तुतकरण में स्तर पर कन्हैया व हेला ख्याल एक दूसरे के अधिक निकट है। कन्हैया व हेला ख्याल दोनों लोकशैलियाँ समूह में व्यक्तियों द्वारा गाई जाती है। दोनों में गायक दल द्वारा प्रस्तुत रचना स्वर ताल में निबद्ध होती है तथा वाद विवाद के रूप में प्रतिस्पर्धा का परिचय भी दोनों लोकशैलियों में पाया जाता है। हार जीत के फैसले का उत्सुकतावश इन्तजार करते सैकडों दर्शक इन ख्याल शैलियों का आनन्द उठाते हैं।करौली का तुर्राकलंगी वस्तुतः श्रव्य एवं दृश्य काव्य है किन्तु लालसोट का हेला ख्याल दृश्य काव्य है। दोनों लोकशैलियों में प्रश्नोत्तर अर्थात सवाज-जवाब का प्रस्तुतिकरण आनन्दपूर्ण व विचित्र होता है।

परिणाम

ख्याल साहित्य एवं विभिन्न आंचलिक लोकशैली राजस्थान की धरोहर है। साथ ही राजस्थान की प्राचीन संस्कृति का परिचायक है। लोकशैली के संरक्षण हेतु सरकार, सामाजिक संस्थाओं, निजी एवं सांस्कृतिक संस्थाओं के उच्च स्तरपर प्रयास करने चाहिये। पूर्वी एवं पश्चिमी अंचल के लोक कलाकारों को भी यह शिकायत रहती है कि इनकी कलाओं को राजस्थान के सांस्कृतिक जगत में कोई स्थान नहीं मिलता। वे जैसे मूलधारा से कटे हुए हैं। संगीत दंगल भी इससे अछूता नही है। फलस्वरूप शहरी शानों शौकत, जोड-तोड की राजनीति व अन्य नियम ज्ञान से शून्य ग्रामीण अंचलों के ये सीधे सादे कलाकार आयोजकों की नजर से ओझल हो जाते है। इस कारण शहरी कलाकारों को ही राष्ट्रीय अन्तरराष्ट्रीय मंचों पर पहुंचने का सुअवसर मिल जाता है।

यदि इन लोकशैलियों के प्रचार-प्रसार, संरक्षण हेतु सरकार द्वारा उचित उपाय नहीं किये गये तो वह दिन दूर नहीं कि जब भारत को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पहचान देने वाली विभिन्न आचंलिक लोक शैलियां समूल नष्ट हो जावेगी और आत्मिक एकता के सूत्र में बांधने में सहायक ये लोकशैलियों के नष्ट होने पर अनेक मुसीबतों एवं कठिनाईयों का सामना करना होगा जिसकी कल्पना भी भयानक है।

सन्दर्भ सूची

1. रमेश चन्द्र गुणार्थी, राजस्थान परिजन परिचय, पृष्ठ संख्या - 126।

2. महेन्द्र भानावत, राजस्थान के लोकनृत्य, मुक्तक प्रकाशन, उदयपुर पृष्ठ 24-25, 33-34।

3. पूर्वी राजस्थान के लोकनृत्य, देवीलाल सांभर लोककला, भाग-5

4. लोकरंग पत्रिका, जवाहर कला केन्द्र, 1997, पृष्ठ 17.24

5 लोकवार्ता की पगडंडिया, डॉ. सत्येन्द्र भारतीय लोकला मंडल, उदयपुर 1974।

6. लोककला निबन्धावली भाग-3, भारतीय लोकला मण्डल, उदयपुर 1957, पृष्ठ 35-36।

7. भुवनेष भानु, बाड़मेर, समन्वयक, नेहरू युवा केन्द्र, बाड.मेर से प्राप्त जानकारी अनुसार।

8. कलाकार एवं वाद्य नेहरू युवा केन्द्र, बाड़मेर की सर्वे रिपोर्ट वर्ष 1993-94।

9. डॉ. सुनीता श्रीमाली, राजस्थान में बाड़मेर जिले की लोक संगीत परम्परा।

10. जगमोहन परिहार, सांस्कृतिक राजस्थान।

11. रामलाल माथुर, लोक स्वर।

12. नीरज डॉ. जयसिंह एवं शर्मा डॉ. बी.एल., राजस्थान की सांस्कृतिक परम्परा।

13. व्यास एवं गहलोत, सामाजिक एवं आर्थिक जीवन।

Corresponding Author

Dr. Sunita Shrimali*

Assistant Professor, Rajasthan Music Institute, Jaipur